■ भूमिका

- पूँजीवादी उत्पादन प्रणाली की एक सामान्य विशेषता होती है अतिरिक्त उत्पादन तथा अल्प उपभोग। दूसरे शब्दों में, मुनाफा प्राप्त करने के अतिरिक्त उत्साह में पूँजीपति अपने ही श्रमिकों की तनख्वाह में कटौती करते हैं और उपभोक्ता की जेब से भी अतिरिक्त रकम खींचना चाहते हैं। इस कारण से स्वयं उनका बाजार ही सिकुड़ जाता है तथा अतिरिक्त उत्पादन की समस्या उत्पन्न होती है। अल्प उपभोग पैदा करने में आधुनिक बैंकिंग प्रणाली तथा शेयर बाजार की भी भूमिका होती है। इस कारण आर्थिक मंदी पूँजीवादी अर्थव्यवस्था की संरचना में ही निहित है।
- 1929-30 ई. की आर्थिक मंदी अमेरिकी शेयर बाजार से आरंभ हुई थी तथा यूरोप से होते हुए यह संपूर्ण विश्व में फैल गई। वैसे तो पूँजीवादी अर्थव्यवस्था में लगभग प्रत्येक दशक में मंदी का चक्र आता रहा था, परंतु 1929-30 ई. की आर्थिक मंदी अपनी तीव्रता और व्यापकता में पहले की मंदी से पृथक थी। एकमात्र सोवियत रूस ही इसके प्रभाव से बचा रहा था। इसका कारण था कि सोवियत रूस की अर्थव्यवस्था उस काल में विश्व अर्थव्यवस्था से कटी हुई थी। इसके अतिरिक्त, सोवियत रूस की समाजवादी अर्थव्यवस्था में बाजार की शक्तियों; यथा- माँग और पूर्ति के नियम की गुंजाइश नहीं थी, अपितु अर्थव्यवस्था राज्य नियंत्रण में आर्थिक आयोजन के माध्यम से संचालित हो रही थी।

■ 1929-30 ई. की विश्व आर्थिक मंदी के कारण-

1. पश्चिमी विश्व की पूँजीवादी अर्थव्यवस्था और उपनिवेश की अर्थव्यवस्था के बीच व्यापार के चक्र में व्यवधान आ गया क्योंकि पश्चिम में कृषि अर्थव्यवस्था के मशीनीकरण के कारण उपनिवेशों के कृषि उत्पादों की माँग में गिरावट आ गई। बदले में उपनिवेशों ने भी पश्चिम से आने वाले विनिर्मित उत्पादों में कटौती कर दी।
2. संयुक्त राज्य अमेरिका तथा यूरोप में होने वाले व्यापार में असंतुलन आ गया था तथा व्यापार संतुलन संयुक्त राज्य अमेरिका के पक्ष में चला गया था। वस्तुत: अमेरिका का उपभोक्ता संबंधी उद्योग यूरोप की तुलना में काफी मज़बूत स्थिति में था, जिसके कारण संयुक्त राज्य अमेरिका की उपभोक्ता संबंधी वस्तुएँ यूरोप के बाज़ार में छा गईं, वहीं यूरोपीय देश संयुक्त राज्य अमेरिका को अपेक्षित मात्रा में वस्तुएँ निर्यात नहीं कर पा रहे थे।
3. यूरोप के आर्थिक पुनर्निर्माण का कार्यक्रम अमेरिकी निवेश पर निर्भर था। अत: जैसे ही अमेरिकी पूँजी खींची गयी, यूरोपीय अर्थव्यवस्था ठप हो गयी।
4. अमेरिकी शेयर बाजार में उथल-पुथल आ गया। वस्तुत: शेयर की बिक्री बढ़ाने के लिए लोगों को मार्जिन मनी पर (10% स्वयं और 90% बैंक ऋण) शेयर खरीदने के लिए प्रोत्साहित किया गया। इस कारण शेयर का भाव तेजी से उठा अर्थात् बुलबुला बन गया। परंतु बैंक ऋण न चुका पाने के कारण लोगों ने तेजी से शेयर की बिक्री शुरू कर दी। इसलिए बुलबुला फूट गया और 24 अक्टूबर, 1929 को शेयर बाजार में भयंकर गिरावट आ गई।

■ इस संकट का सामना करने के लिए उठाए गए कदम-

1. 1932 में लाउसेन सम्मेलन (Lausanne Conference) के आधार पर जर्मनी की लगभग 90% ऋण की राशि माफ कर दी गई, ताकि अगर जर्मन अर्थव्यवस्था ऊपर उठेगी, तो अन्य अर्थव्यवस्थाओं में भी माँग बढ़ेगी।
2. 'टैरिफ (चुंगी) वार एवं करेन्सी वार' से बचने के लिए 1933 में लंदन में यूरोपीय राष्ट्रों का सम्मेलन हुआ। इसमें लगभग 66 देशों ने भाग लिया, किंतु अमेरिका की ज़िद के कारण कोई अंतिम समझौता नहीं हो सका।
3. कुछ यूरोपीय राष्ट्रों ने निजी तौर पर समस्या का हल खोजने का प्रयास किया। इन्होंने सरकारी व्यय एवं निजी खर्च में कटौती के माध्यम से अपने बजट को नियंत्रित करने का प्रयास किया। परंतु इससे समस्या और भी बढ़ गई।
4. नाजी जर्मनी ने बहुत हद तक इसका समाधान खोजने का प्रयास किया। हिटलर द्वारा सरकारी व्यय में वृद्धि करके रोजगार संवर्द्धन की दिशा में कदम उठाया गया। इसके तहत उसने सैनिकों की भर्ती, सार्वजनिक निर्माण कार्य, हथियारों का उत्पादन शुरू किया। परंतु इस क्रम में अर्थव्यवस्था युद्ध की ओर मुड़ गई।
5. इसका एक समाधान केन्सियन अर्थशास्त्र ने देने का प्रयास किया, जब उसने कर प्रणाली और सरकारी व्यय को आर्थिक मंदी के एक समाधान के रूप में प्रस्तुत किया। केन्स ने इस मत को अस्वीकार कर दिया कि उत्पादन (Production) और आय (Income) के बीच संतुलन बना रहता है। उसका विचार था कि कुल आय बाज़ार में दुबारा लौटकर नहीं आ पाती। अगर अर्थव्यवस्था में नकारात्मक प्रवृत्ति (Negative trend) दिखती है, तो निवेशक एवं उपभोक्ता दोनों भयभीत हो जाते हैं तथा पैसे होने के बावजूद भी वे निवेश एवं खरीदारी में रुचि नहीं

दिखाते। इससे माँग में और भी गिरावट हो जाती है तथा बेरोज़गारी बढ़ जाती है। ऐसी स्थिति में 'Animal Spirits' को प्रेरित करने के लिये स्वयं सरकार को आगे आना होगा और सरकारी व्यय के माध्यम से माँग को प्रेरित करना होगा।

6. इसका एक व्यावहारिक समाधान अमेरिकी प्रेसिडेंट रूजवेल्ट की **'न्यू डील नीति'** ने दिया, जिसके तहत सरकारी व्यय के माध्यम से मंदी से निपटने का प्रयास किया गया। वस्तुत: अगर केनेसियन अर्थशास्त्र पूँजीवाद के नए संस्करण के सैद्धांतिक पक्ष को उद्घाटित करता, तो 'न्यू डील नीति' (New Deal Policy) इसके व्यवहारिक पक्ष को। केन्स का मानना था कि लोगों को जब रोज़गार के बदले मजदूरी मिलेगी और वे खरीदारी आरंभ करेंगे तो मंदी का चक्र स्वयं टूट जाएगा। अत: रूजवेल्ट ने कृषि क्षेत्र में सुधार, बैंकिंग सुधार, सामाजिक सुरक्षा नीति आदि पर बल दिया तथा सार्वजनिक निर्माण कार्य में एक बड़ी रकम निवेशित की। इसके अतिरिक्त उसने टेनेसी घाटी योजना लाकर अतिरिक्त लोगों को रोजगार देने का प्रयास किया तथा सरकारी बजट को काफी बढ़ा दिया। इन सभी सुधारों का उद्देश्य था बाजार में माँग सृजित करना। इस प्रकार मंदी पर बहुत हद तक काबू पाया गया।

प्रश्न: आर्थिक महामंदी से निबटने के लिए किन नीतिगत साधनों का उपयोग किया गया था? (UPSC- 2013)

उत्तर:- मंदी की स्थिति पूँजीवादी अर्थव्यवस्था के तर्कशास्त्र में ही निहित है। पूँजीवादी अर्थव्यवस्था में लगभग प्रत्येक दशक में अवसान का चक्र आता रहा था, किंतु 1929-30 की विश्व आर्थिक मंदी अपने प्रसार, अपनी तीव्रता तथा व्यापकता में कहीं आगे निकल गयी थी। स्वाभाविक रूप में इसके समाधान के उपाय भी उतने ही जटिल सिद्ध हुए।

इस प्रकार की मंदी के साथ संघर्ष करने का पूँजीवादी देशों के समक्ष पहला अनुभव था। इन देशों के द्वारा सामूहिक एवं व्यक्तिगत तौर पर कई कदम उठाए गए। सामूहिक समाधान के तौर पर 1932 ई. में लाउसेन सम्मेलन का आयोजन किया गया तथा इसके तहत जर्मनी के युद्ध मुआवजे की राशि को समाप्त कर दिया गया। फिर 1933 ई. में लंदन में एक सम्मेलन का आयोजन किया गया, किंतु यह सम्मेलन कोई निश्चित समाधान तक नहीं पहुँच पाया। अंत में विभिन्न पूँजीवादी देश निजी स्तर पर समाधान का प्रयास करने लगे। जर्मनी एवं फ्रांस के द्वारा सार्वजनिक व्यय में कटौती करने का प्रयास किया गया, किंतु इससे समस्या सुलझने की बजाय और भी उलझ गई। वहीं ब्रिटेन ने बजट नियंत्रण की नीति अपनायी। वह भी कारगर नहीं रही। फिर पूँजीवादी देशों ने अपने गृह उद्योगों को बचाने के लिए एक-दूसरे के विरूद्ध चुंगी की दीवार स्थापित करने का प्रयास किया। इस कारण से एक प्रकार का चुंगी युद्ध छिड़ गया। उसी प्रकार विभिन्न देशों के द्वारा स्वर्णमान त्यागकर निर्यात संवर्द्धन के लिए मुद्रा के अवमूल्यन की नीति, जिसे एक अर्थशास्त्री जॉनसन ने 'Beggar thy neighbour policy' का नाम दिया है, अपनायी गयी, किंतु उपर्युक्त सभी तरीके अप्रभावी ही सिद्ध हुए थे। आगे जर्मनी की नाजी सरकार ने रोजगार संवर्द्धन के लिए सार्वजनिक निर्माण पर बल दिया। यह तरीका बहुत कारगर रहा, किंतु इसने जर्मन अर्थव्यवस्था को युद्ध के पक्ष में मोड़ दिया। दूसरी तरफ संयुक्त राज्य अमेरिका के राष्ट्रपति फ्रैंकलिन डी. रूजवेल्ट के द्वारा न्यू डील की नीति के माध्यम से अमेरिकी अर्थव्यवस्था में प्रत्यक्ष हस्तक्षेप कर माँग-वृद्धि के लिए कदम उठाया गया। यह कदम बहुत प्रभावी सिद्ध हुआ। किंतु इसने पूँजीवादी अर्थव्यवस्था के स्वरूप में परिवर्तन ला दिया। यह पूँजीवाद राजकीय हस्तक्षेप पर आधारित था, मुक्त अर्थव्यवस्था के सिद्धांत पर नहीं।

इस तरह विभिन्न देशों ने आर्थिक मंदी के विरूद्ध अलग-अलग प्रतिक्रिया दिखायी थी।

विश्व आर्थिक मंदी का प्रभाव

पूँजीवाद का संकट

पूँजीवाद के स्वरूप में परिवर्तन	संकट का सामना करने के क्रम में सरकारों की शक्ति एवं हस्तक्षेप बढ़ गया।	पूँजीवाद के संकट का फायदा समाजवाद को, विशेषकर इसलिए कि सोवियत रूस की अर्थव्यवस्था मंदी के चक्र से बची रही थी। इसलिए संपूर्ण विश्व में समाजवाद की प्रगति।	समाजवाद की बढ़ती हुई लोकप्रियता से पूँजीपति एवं जमींदार चिंतित और बदले में उनके द्वारा उग्र राष्ट्रवादी विचारधारा फासीवाद को प्रोत्साहन।

- केनेसियन अर्थशास्त्र के द्वारा राज्य हस्तक्षेप पर आधारित पूँजीवाद का विकास।
- अमेरिकी प्रेसिडेन्ट रूजवेल्ट के द्वारा आर्थिक नीति के संचालन में सरकार की भूमिका को बढ़ाना।

■ **विश्व आर्थिक मंदी का प्रभाव:-**

1. विश्व आर्थिक मंदी का सामना करने के क्रम में स्वयं पूँजीवाद का स्वरूप ही बदल गया। पूँजीवाद ने समाजवादी अर्थव्यवस्था की कुछ विशेषताओं को अपना लिया। उदाहरण के लिए, आर्थिक आयोजन। इस परिवर्तन की वैचारिक प्रेरणा एक नए अर्थशास्त्री जॉन मेनार्ड केन्स से मिली। जहाँ एडम स्मिथ मुक्त अर्थव्यवस्था की बात करते थे, वहीं केन्स अर्थव्यवस्था में माँग को बनाए रखने के लिए सरकारी हस्तक्षेप तथा सामाजिक सुरक्षा की बात

करने लगे। इस प्रकार पूँजीवाद के स्वरूप में परिवर्तन आ गया। समाजवादी व्यवस्था के विरूद्ध अपनी विजय का सिंहनाद करने वाली पूँजीवादी अर्थव्यवस्था स्वयं समाजवाद की ऋणी है, समाजवाद ने तो इसके रूप को ही परिवर्तित कर दिया।

2. विश्व आर्थिक मंदी ने यूरोप की प्रजातांत्रिक सरकारों को हिलाकर रख दिया। इस आर्थिक मंदी का सामना करने के क्रम में यूरोपीय सरकारों की शक्ति एवं हस्तक्षेप बढ़ गया।
3. एक तरफ आर्थिक मंदी ने पूँजीवादी मॉडल की कमजोरी को उद्घाटित कर दिया था, वहीं दूसरी तरफ उसने सोवियत रूस के समाजवादी मॉडल की सफलता को भी स्पष्ट कर दिया। इसलिए वैश्विक स्तर पर समाजवादी विचारों की ओर बुद्धिजीवियों और नेताओं का आकर्षण बढ़ गया।
4. समाजवाद की प्रगति ने पूँजीपति एवं जमींदार को भयभीत कर दिया, फिर समाजवाद की प्रगति को रोकने के लिये एक आक्रामक विचारधारा के रूप में फासीवाद का प्रसार हुआ। उसने इटली एवं जर्मनी में एक राजनीतिक मॉडल का रूप ले लिया। अंततः इसका परिणाम द्वितीय विश्वयुद्ध के रूप में सामने आया।

प्रश्नः- विश्व आर्थिक मंदी ने यूरोप की अर्थव्यवस्था एवं राजनीति दोनों को परिवर्तित कर दिया। विश्लेषण कीजिए।

***(प्रश्न विश्लेषणः-** यह प्रश्न अपने स्वरूप में 'Hypothetical' है। इसमें विचार एवं उदाहरण से अर्थव्यवस्था एवं राजनीति में होने वाला परिवर्तन समझाना है।)*

उत्तरः विश्व आर्थिक मंदी (1929-30) पूँजीवाद के संकट को दर्शाती है। इसने न केवल पूँजीवादी अर्थव्यवस्था के स्वरूप में परिवर्तन लाया, बल्कि यूरोप की राजनीति में भी उथल-पुथल ला दी।

विश्व आर्थिक मंदी ने क्लासिकल अर्थशास्त्र पर आधारित मुक्त अर्थव्यवस्था की नीति को गहरा धक्का पहुँचाया। इसके परिणामस्वरूप केनेसियन अर्थशास्त्र का विकास हुआ, जिसने माँग-प्रबंधन (Demand management) में राज्य की भूमिका पर बल देकर एक नयी आर्थिक नीति को जन्म दिया। केनेसियन अर्थशास्त्र के साथ राजकोषीय नीति (fiscal policy) की शुरूआत हुई तथा पूँजीवाद ने समाजवाद के कुछ तत्वों को अपना लिया। फिर भी संकट के प्रति यह एक रचनात्मक प्रतिक्रिया सिद्ध हुई।

दूसरी तरफ, पूँजीवादी संकट के विरुद्ध विध्वंशात्मक प्रतिक्रिया फासीवाद के रूप में प्रकट हुई और इसने यूरोप की राजनीति को एक पृथक दिशा दे दी। वस्तुतः पूँजीवाद के संकट के कारण यूरोप में समाजवाद की प्रगति होने लगी। इससे भयभीत होकर पूँजीपतियों ने आक्रामक राष्ट्रवाद आधारित फासीवाद को समर्थन दिया, ताकि लोगों का ध्यान आन्तरिक संघर्ष से बाह्य संघर्ष की ओर मुड़ जाए। परिणाम था हिटलर एवं मुसोलिनी जैसे फासीवादी नेता का उद्भव एवं द्वितीय विश्व युद्ध।

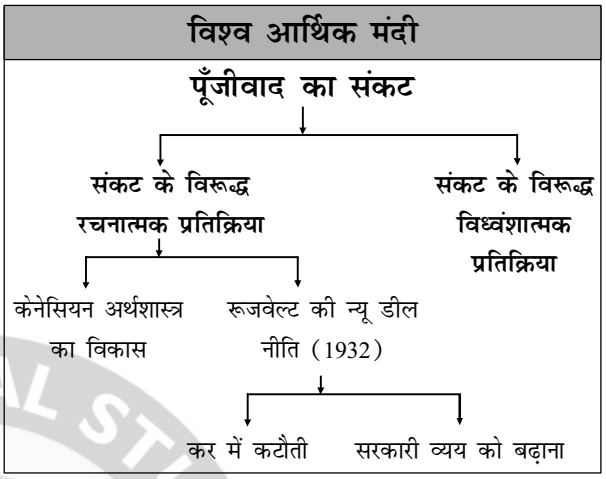

■ **पूँजीवाद के दूसरे बड़े संकट के विरुद्ध प्रतिक्रिया**

• **रचनात्मक प्रतिक्रियाः**

1. **केनेसियन अर्थशास्त्र का विकास**- पूँजीवाद के इस संकट ने क्लासिकल अर्थशास्त्र की मान्यताओं पर प्रश्न चिह्न लगा दिया था। इसके विकास में एडम स्मिथ तथा डेविड रिकॉर्डो से लेकर अर्थशास्त्री जे.बी. सेय (J.B. Say) तक की भूमिका रही थी। आर्थिक मंदी के काल में अर्थशास्त्र में 'सेज लॉ' बहुत प्रभावी था। वह यह मानकर चलता था कि उत्पादन अपनी माँग का स्वयं सृजन कर लेता है तथा कुल आय, कुल व्यय के बराबर होती है। इस कारण उत्पादन के साथ ही रोजगार संवर्द्धन होता है और स्वयं माँग का सृजन होता चलता है। इस फॉर्मूले के अनुसार अर्थव्यवस्था में पूर्ण रोजगार की परिकल्पना की गई थी।

• परंतु 1929-30 की आर्थिक मंदी के समय यह देखा गया कि माँग एवं उत्पादन में गिरावट आ गई थी और बेरोजगारी 25% तक पहुँच गई थी। किंतु क्लासिकल अर्थशास्त्री इसे महज एक अस्वाभाविक विकास मानते थे। इनके विचार में इसका कारण रहा था प्रबंधन के द्वारा श्रमिकों की मजदूरी की दर कम नहीं कर पाना क्योंकि, इनके विचार में, इस परिस्थिति में जब माँग में गिरावट होती है, तो वस्तुओं के मूल्य में गिरावट होना स्वाभाविक होता है, फिर उसी के अनुरूप श्रमिकों की मजदूरी कम की जाती है। किंतु श्रमिक चेतना में होने वाले विकास के कारण प्रबंधन मजदूरी की दर कम नहीं कर सका। इस कारण वस्तुओं के मूल्य में गिरावट नहीं आई तथा बाजार में रुकावट आने

लगी। उनके विचार में, यह एक तात्कालिक समस्या थी जो भविष्य में स्वयं ठीक हो जाएगी।

- यही समय है कि जॉन मेनार्ड केंस उभरकर आया और उसने यह घोषित किया कि भविष्य की बात मत कीजिए क्योंकि भविष्य में सभी मरे हुए हैं (In future all dead)। फिर केन्स के द्वारा एक नया आर्थिक सिद्धांत लाया गया, जब उसने 1936 में The theory of employment, interest and money लिखी। केन्सियन अर्थशास्त्र का बल निम्नलिखित कारकों पर रहा था –

i. यह धारणा सही नहीं है कि कुल व्यय, कुल आय के बराबर होता है क्योंकि लोग अपनी आय का कुछ भाग बचा कर रख लेते हैं। अत: वह रकम माँग का सृजन नहीं कर सकती।

ii. अगर निवेश का माहौल नहीं होता, तो निजी निवेशक भी बड़ी रकम होने के बावजूद निवेश के लिए सामने नहीं आते। ऐसी स्थिति में अर्थव्यवस्था में एनिमल स्पिरिट (Animal spirit) को बनाए रखने के लिए सरकार को निवेश के लिए सामने आना होगा।

iii. उसका मानना था कि अर्थव्यवस्था निजी क्षेत्र में ही रहे, परंतु सरकार को माँग प्रबंधन के लिए आगे आना चाहिए। सरकार के पास दो उपकरण होते हैं- करारोपण एवं सरकारी व्यय। अगर अर्थव्यवस्था में माँग में गिरावट होती है, तो सरकार को कर की राशि कम कर देनी चाहिए तथा सरकारी खर्च को बढ़ा देना चाहिए। माँग बढ़ेगी, तो मूल्य बढ़ेगा और मूल्य बढ़ेगा, तो उत्पादन बढ़ेगा, उत्पादन बढ़ेगा तो रोजगार बढ़ेगा, रोजगार बढ़ेगा तो फिर माँग बढ़ेगी। इस प्रकार से यह चक्र तब तक चलता रहेगा जब तक पूर्ण रोजगार की स्थिति न आ जाए। किंतु इस स्थिति में माँग इतनी अधिक बढ़ जाएगी कि अर्थव्यवस्था पर स्फीतिकारी प्रभाव पड़ने लगेगा। फिर सरकार को कर की दर को बढ़ा देना चाहिए और सरकारी व्यय में कटौती करनी चाहिए। (इसी काल में सरकार उस घाटे को पूरा कर सकती है, जो उसने सरकारी व्यय के माध्यम से किया है।)

2. **अमेरिकी राष्ट्रपति रूजवेल्ट की न्यू डील की नीति**- मंदी की चुनौती को संयुक्त राज्य अमेरिका ने स्वीकार किया और प्रेसिडेंट के पद पर चयन होने के पश्चात् फ्रैंकलिन डी. रूजवेल्ट ने 1932 में न्यू डील अथवा नये व्यवहार की घोषणा की। उन्होंने यह घोषित किया कि विश्व एवं संयुक्त राज्य अमेरिका को आर्थिक मंदी के चक्र से बचाने के लिए हम न्यू डील की घोषणा करते हैं।

- रूजवेल्ट ने 100 दिनों का सुधार लागू किया। यद्यपि वह मेनार्ड केंस के प्रत्यक्ष निर्देशन में कार्य नहीं कर रहा था फिर भी उसने जो सुधार किए, वे केंस के निर्देशन के अनुकूल था। उसने जो भी सुधार किए, उनका उद्देश्य अर्थव्यवस्था में माँग सृजन करना और मंदी का चक्र तोड़ना था, यथा- सार्वजनिक निर्माण कार्य को प्रोत्साहन, लोगों को सब्सिडी देना, आवास योजना का क्रियान्वयन, बैंक शाख व्यवस्था को मजबूत बनाना, टेनेसी घाटी योजना लाकर अतिरिक्त लोगों को रोजगार देना आदि।
- उपर्युक्त दोनों प्रकार की प्रतिक्रिया को हम आर्थिक मंदी के विरुद्ध रचनात्मक प्रतिक्रिया के रूप में देख सकते हैं। हालांकि, यह एक आर्थिक घटना थी, परंतु इसने अर्थव्यवस्था के साथ-साथ राजनीति एवं संविधान को भी दिशा दे दी।

KHAN SIR

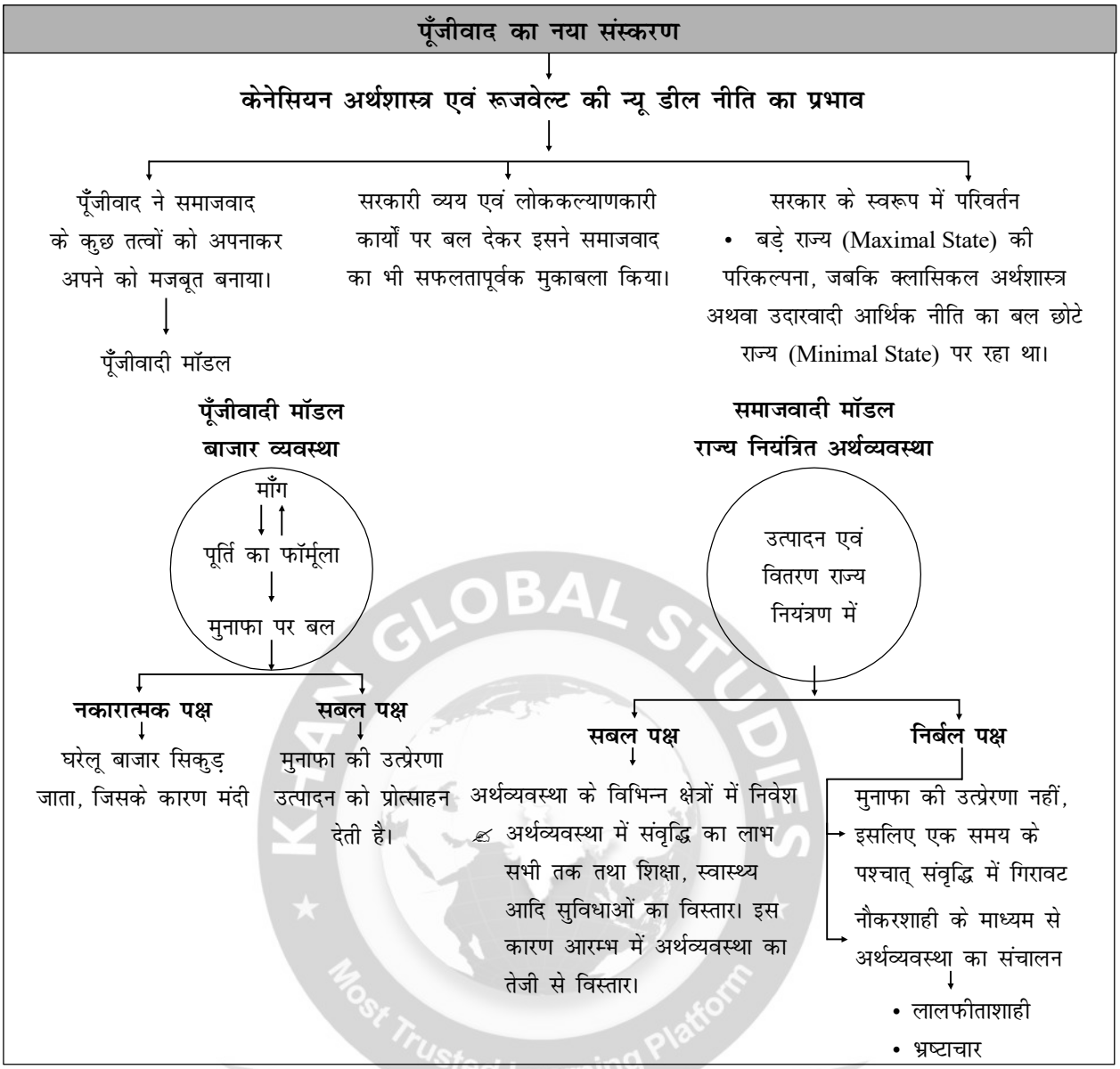

■ **केनेसियन अर्थशास्त्र एवं न्यू डील का प्रभाव –**

1. **पूँजीवादी अर्थव्यवस्था:-** पूँजीवादी अर्थव्यवस्था के व्यवहार में परिवर्तन आ गया। जहाँ पहले पूँजीवाद का मुख्य बल उत्पादन पर रहा था, अब उसका बल खपत पर हो गया। ऐसा माना जाता है कि मेनार्ड केंस और रूजवेल्ट दोनों ने समाजवाद की कुछ विशेषताओं को चुराकर पूँजीवाद को मजबूत बनाया। अब पूँजीवाद ने समाजवाद से आर्थिक आयोजन का मॉडल ले लिया, ताकि वह भविष्य में संकट से बचा रहे।
2. **राजनीतिक क्षेत्र:-** पूँजीवाद के लिए एक बड़ी चुनौती रही थी सोवियत रूस के द्वारा प्रेरित समाजवादी मॉडल, जिसमें श्रमिक आंदोलन का खतरा छिपा हुआ था। परंतु यह नया पूँजीवाद सफलतापूर्वक समाजवाद का मुकाबला कर सकता था क्योंकि इसने एक कल्याणकारी राज्य का मुखौटा धारण कर लिया था।
3. **संविधान के स्वरूप में परिवर्तन:-** क्लासिकल अर्थशास्त्र एक सीमित राज्य की बात करता रहा था, लेकिन इस नए पूँजीवाद के तहत राज्य का कार्य एवं दायरा काफी बढ़ गया था और उसने एक वृहद् राज्य (Maximal State) का रूप ले लिया।

पूँजीवादी मॉडल

पूँजीवादी मॉडल कोई एकाश्म मॉडल नहीं था, बल्कि देशकाल एवं परिस्थिति के अनुसार इसके स्वरूप में थोड़ा-बहुत अंतर बना रहा। सामान्यत: इसकी निम्नलिखित विशेषताएँ रहीं-

- अर्थव्यवस्था को निजी स्वामित्व में रखा गया, सरकारी नियंत्रण में नहीं।
- निजी निवेश, निजी उद्यम तथा निजी लाभ को प्रोत्साहन।
- आर्थिक गतिविधियाँ बाज़ार की शक्तियों पर छोड़ी गईं (माँग और पूर्ति के नियम पर), क्योंकि सामान्यत: यह मान्यता रही कि बाज़ार का निर्णय किसी अथॉरिटी के निर्णय से अधिक तर्कसंगत होता है।

- पूँजीवाद का मुख्य बल संवृद्धि पर होता था तथा यह मानकर चला जाता था कि इस संवृद्धि का लाभ अंततः सभी तक पहुँचेगा।
- **सबल पक्ष**– निजी लाभ तथा निजी उद्यम को प्रोत्साहन मिलने से उत्पादन बढ़ता है और इससे संवृद्धि भी बढ़ती है।
- **निर्बल पक्ष**– मुनाफा और निजी उद्यम पर अत्यधिक बल दिये जाने के कारण आर्थिक विभाजन बढ़ता जाता है। कुछ लोगों की प्रगति होती है, परंतु एक बड़ी जनसंख्या वंचित रह जाती है। इसलिये सामाजिक न्याय की गुंजाइश नहीं होती। इस आर्थिक विषमता के कारण स्वयं पूँजीपतियों का बाज़ार सिमटता चला जाता है। इस कारण अतिरिक्त उत्पादन की समस्या आ जाती है और फिर आर्थिक मंदी पूँजीवादी अर्थव्यवस्था का स्वाभाविक लक्षण बन जाती है।

समाजवादी मॉडल

समाजवादी मॉडल का आधार मार्क्सवाद के द्वारा निर्मित किया गया था, परंतु कार्ल मार्क्स ने स्वयं अर्थव्यवस्था का कोई मॉडल नहीं दिया था। आगे लेनिन और स्टालिन ने सोवियत रूस में निरंतर प्रयोगों के बाद जो मॉडल स्थापित किया, उसे समाजवादी मॉडल के नाम से जाना गया। समाजवादी अर्थव्यवस्था की निम्नलिखित विशेषताएँ रहीं–

- राज्य ने माँग और पूर्ति के नियमों पर आधारित बाज़ार की शक्तियों में सीधा हस्तक्षेप किया तथा अपने ढंग से अर्थव्यवस्था को दिशा देने लगा।
- संपूर्ण अर्थव्यवस्था राज्य के नियंत्रण में ला दी गई, यथा– भूमि का सामूहिकीकरण कर दिया गया तथा उद्योगों को राज्य के प्रत्यक्ष नियंत्रण में ला दिया गया।
- बाज़ार की शक्तियों का स्थान आर्थिक आयोजन ने ले लिया। दूसरे शब्दों में, जहाँ पूँजीवादी अर्थव्यवस्था में वस्तुओं का उत्पादन बाज़ार की माँग निर्धारित करती थी, वहीं समाजवादी अर्थव्यवस्था में वस्तुओं की माँग राज्य निर्धारित करने लगा।

समाजवादी अर्थव्यवस्था के लाभ

- राज्य के निरीक्षण के कारण व्यापक स्तर पर संसाधनों का दोहन होने लगा। कृषि के क्षेत्र में विषमता को समाप्त कर भूमि का सामूहिकीकरण कर दिया गया। इससे उत्पादन में वृद्धि हुई तथा प्रति व्यक्ति आय में भी वृद्धि हुई। इससे वस्तुओं की माँग बढ़ी।
- पूँजीगत उद्योग एवं इंफ्रास्ट्रक्चर आधारित संरचना के विकास पर विशेष बल दिया गया।
- राज्य के द्वारा मुफ्त में शिक्षा, स्वास्थ्य एवं परिवहन की व्यवस्था की गई। इससे मानव संसाधन का व्यापक विकास हुआ, निर्धनता लगभग समाप्त हो गई।

इस प्रकार, इस मॉडल से सोवियत रूस की अर्थव्यवस्था में लगभग 40% की दर से सकल घरेलू उत्पाद (GDP) में वृद्धि हुई।

निर्बल पक्ष

- उत्पादन एवं श्रम की मुख्य उत्प्रेरणा मुनाफा होती है, चूँकि मुनाफे को दबा दिया गया, इसलिये अर्थव्यवस्था में दीर्घकाल के लिये संवृद्धि की उत्प्रेरणा नहीं रह गई।
- बाज़ार की शक्तियाँ वस्तुओं की गुणवत्ता को बढ़ाती हैं तथा वस्तुओं के मूल्य को कम करती हैं क्योंकि ये प्रतिस्पर्द्धा से प्रेरित होती हैं। परंतु समाजवादी अर्थव्यवस्था के अंतर्गत गुणवत्ता और प्रतिस्पर्द्धा को बनाए रखना कठिन हो जाता है।
- चूँकि, उत्पादन और वितरण राज्य का दायित्व होता है। इसलिये ये एक व्यापक नौकरशाही के द्वारा संचालित किये जाते थे। इस कारण आगे इनमें लालफीताशाही और भ्रष्टाचार की प्रवृत्तियाँ घर कर गईं।

अंतर्अनुशासनात्मक दृष्टिकोण

जैसा कि हम पीछे भी देखते रहे हैं कि विश्व इतिहास के अध्ययन के क्रम में हम परिवर्तन के तत्त्वों को रेखांकित करते हैं। परिवर्तन के ये तत्त्व समकालीन राजनीति, अर्थव्यवस्था, समाज, संविधान, संस्कृति आदि सभी क्षेत्रों को प्रभावित करते रहे हैं।

अगर हम विश्व आर्थिक मंदी के दूरगामी प्रभाव पर नज़र डालते हैं तो हमें निम्नलिखित परिवर्तनों का ज्ञान मिलता है–

केन्सियन अर्थशास्त्र तथा पूंजीवाद का नया संस्करण

पूंजीवाद ने अपने संपूर्ण इतिहास में इतना बड़ा संकट कभी नहीं झेला था, जैसा कि उसने 1930 की विश्व आर्थिक मंदी के काल में झेला। ऐसा प्रतीत हुआ कि मानो पूंजीवाद का खात्मा हो गया। एडम स्मिथ के काल से लेकर जे.बी. सेय (J.B. Say) के काल तक विकसित क्लासिकल अर्थशास्त्र की विश्वसनीयता पर प्रश्नचिह्न लग गया था।

क्लासिकल अर्थशास्त्र का बल इस बात पर रहा था कि एक अदृश्य हाथ (Invisible Hand) अर्थव्यवस्था का संचालन करता है। अर्थव्यवस्था एक स्वाभाविक संतुलन (Equilibrium) पर आधारित होती है– यह पूर्ति एवं मांग (Supply and Demand) के बीच का संतुलन होता है। इसके विचार में पूर्ति अपने मांग का सृजन स्वयं कर लेती है

क्योंकि कुल उत्पादन, कुल आय (Income) के बराबर होता है। उदाहरण के लिये, अगर एक लाख रुपये की वस्तु का उत्पादन हुआ और 50 हजार रुपये पूंजीपति के मुनाफे और 50 हजार रुपये श्रमिकों की मजदूरी के रूप में चला गया तो वे रुपये फिर दुबारा लौट कर बाज़ार में आएंगे और मांग का सृजन करते रहेंगे। इससे उत्पादन होता रहेगा और श्रमिकों को रोज़गार मिलता रहेगा। इस प्रकार क्लासिकल अर्थशास्त्रियों के विचार में मुक्त अर्थव्यवस्था में बेरोज़गारी के लिये कोई जगह नहीं थी क्योंकि उनका मानना था कि अगर मांग कम होगी तो वस्तुओं का मूल्य कम होगा और श्रमिकों के वेतन में भी कटौती होगी। फिर वस्तुओं के सस्ता हो जाने से संबंधित देश को लाभ मिलेगा और अंतर्राष्ट्रीय बाजार में उसकी वस्तुएँ अधिक बिकेंगी। उधर वस्तुओं के सस्ते हो जाने से श्रमिकों का वेतन कम होने के बाद भी उनकी स्थिति अच्छी रहेगी।

परंतु आर्थिक मंदी (1929-30) के काल में देखा गया कि मांग में भारी गिरावट आ गई थी तथा बेरोज़गारी की दर बढ़कर 25 प्रतिशत तक पहुँच गई थी। इसके जवाब में क्लासिकल अर्थशास्त्री यह कह रहे थे कि यह एक अल्पकालीन उथल-पुथल है और फिर इस उथल-पुथल का कारण भी श्रमिक एवं ट्रेड यूनियन हैं क्योंकि मांग में कमी होने के बावजूद भी इन्होंने मज़दूरी में कटौती नहीं होने दी। अगर अभी भी बाज़ार को स्वतंत्र रूप में छोड़ दिया जाए तो फिर दीर्घकाल में अर्थव्यवस्था में संतुलन आ जाएगा।

जे.एम. केन्स ने इस मत को अस्वीकार कर दिया। उसी समय उसकी यह प्रसिद्ध घोषणा आई कि दीर्घकाल में सभी मरे हुए हैं (In long run all are dead)। केन्स ने इस मत को अस्वीकार कर दिया कि उत्पादन (Production) और आय (Income) के बीच संतुलन बना रहता है। उसका विचार था कि कुल आय बाज़ार में दुबारा लौटकर नहीं आ पाती। अगर अर्थव्यवस्था में नकारात्मक प्रवृति (Negative trend) दिखती है तो निवेशक एवं उपभोक्ता दोनों भयभीत हो जाते हैं तथा पैसे होने के बावजूद भी वे निवेश एवं खरीदारी में रुचि नहीं दिखाते। इससे मांग में और भी गिरावट हो जाती है तथा बेरोज़गारी बढ़ जाती है। ऐसी स्थिति में 'Animal Spirits' को प्रेरित करने के लिये स्वयं सरकार को आगे आना होगा और सरकारी व्यय के माध्यम से मांग को प्रेरित करना होगा।

इस प्रकार जे.एम. केन्स ने पहली बार राजकोषीय नीति (Fiscal Policy) की नींव रखी। उसने यह स्पष्ट कर दिया कि पूंजीपति ही पूंजीवाद के शत्रु बन जाते हैं। इसलिये कोई अदृश्य हाथ (Invisible Hand) बाजार को नहीं चला सकता बल्कि अर्थव्यवस्था के संचालन के लिये सरकार को आगे आना होगा तथा मांग प्रबंधन (Demand Management) करना होगा। उसके विचार में सरकार के पास दो उपकरण हैं- सरकारी व्यय (Government Expenditure) तथा कर (Taxation)। अगर मांग में गिरावट दिखती है तो सरकार अपने व्यय को बढ़ा दे और कर में कटौती कर दे। इससे बाजार में अतिरिक्त रकम आएगी और मांग में वृद्धि होगी। अगर मांग बढ़ेगी तो मूल्य बढ़ेगा, मूल्य बढ़ेगा तो उत्पादन बढ़ेगा, उत्पादन बढ़ेगा तो रोज़गार का संवर्द्धन होगा। फिर जब संपूर्ण रोज़गार की स्थिति आ जाएगी तो मांग इतनी बढ़ जाएगी कि मुद्रास्फीति (Inflation) का प्रभाव दिखने लगेगा तो फिर सरकार, सरकारी व्यय में कटौती कर दे और कर की राशि बढ़ा दे, इससे मांग संतुलित हो जाएगी।

1936 में लिखित अपनी पुस्तक में उसने अपना यह विचार रखा। उसे पूंजीवाद का रक्षक बताया जाता है। आर्थिक मंदी दूर करने में केंसियन अर्थशास्त्र ने बड़ी भूमिका निभाई। सबसे बढ़कर इस मॉडल के आधार पर 1970 तक पूंजीवाद का स्वर्णयुग (Golden Age) कायम रहा।

फ्रैंकलिन डी. रूजवेल्ट की 'न्यू डील नीति'

अगर केन्सियन अर्थशास्त्र पूंजीवाद के नए संस्करण के सैद्धांतिक पक्ष को उद्घाटित करता तो अमेरिकी राष्ट्रपति फ्रैंकलिन डी. रूजवेल्ट के द्वारा घोषित 'न्यू डील नीति' (New Deal Policy) इसके व्यवहारिक पक्ष को। 1932 के प्रेसीडेंट के चुनाव में रूजवेल्ट ने लोगों को यह आश्वासन दिया था कि हम आपको इस आर्थिक मंदी के चक्र से उबारेंगे। फिर एक बड़े बहुमत से वह चुनाव जीता। तभी 1933 में 'न्यूयॉर्क टाइम्स' में केन्स ने अपने एक लेख में रूजवेल्ट से यह अपील की कि वह उसके आर्थिक मॉडल पर काम करे। उसका मानना था कि लोगों को रोज़गार मिले अगर कोई दूसरा काम नहीं है तो फिर सभी को यह कहा जाय कि वह गड्डा खोदें और उन्हें भर दें। उन्हें जब मजदूरी मिलेगी और वे खरीदारी आरंभ करेंगे तो मंदी का चक्र स्वयं टूट जाएगा।

1933 में रूजवेल्ट ने 100 दिनों के सुधारों की घोषणा की। उसका बल 'थ्री आर' पर था, 'रिलिफ', 'रिकवरी' एंड 'रिफॉर्म्स'। इसके तहत उसने कृषि क्षेत्र में सुधार, बैंकिंग सुधार, सामाजिक सुरक्षा नीति आदि पर बल दिया तथा सार्वजनिक निर्माण (Public Works) कार्य में एक बड़ी रकम निवेशित की। सरकारी बजट को काफी बढ़ा दिया गया और उसके लिये घाटे की वित्त (Deficit Financing) की व्यवस्था की गई। इन सभी सुधारों का उद्देश्य था, बाजार में मांग सृजित (Demand Creation) करना। इस प्रकार मंदी पर बहुत हद तक काबू पाया गया। हालाँकि, कुछ आलोचकों का मानना है कि मंदी की समस्या द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात ही दूर हो सकी।

संविधान और सरकार की दिशा

ऊपर हमने देखा कि पूंजीवादी अर्थव्यवस्था के संकट का सामना करने के क्रम में नए आर्थिक मॉडल का विकास हुआ तथा इस क्रम में केंसियन अर्थशास्त्र तथा रूजवेल्ट की न्यू डील नीति अस्तित्व में आई। यद्यपि यह एक आर्थिक सच्चाई थी, परंतु इसका प्रभाव अन्य क्षेत्रों पर भी देखा गया। इन्हीं में से एक क्षेत्र है संविधान और सरकार।

क्लासिकल अर्थशास्त्र, आर्थिक गतिविधियों को बाज़ार पर छोड़ता था और राज्य की भूमिका को कानून व्यवस्था की स्थापना तक ही सीमित रखता था। इस क्रम में एक लघु राज्य (Minimal State) की अवधारणा आई थी। परंतु केन्सियन अर्थशास्त्र एवं रूजवेल्ट की नीति ने राज्य की भूमिका को काफी बढ़ा दिया। अब राज्य का कार्य अर्थव्यवस्था में मांग प्रबंधन करना भी था। इस क्रम में लोक कल्याणकारी कार्य का संचालन किया गया। जाहिर है अब राज्य के कर में वृद्धि कर दी गई। इस तरह एक वृहद् राज्य (Maximal State) की अवधारणा उभरकर आई। जैसा कि पीछे हमने देखा था कि मध्यवर्ग इस प्रकार के राज्य को नहीं चाहता था, परंतु पूंजीवाद के संकट और साम्यवाद के भय से उसे यह स्वीकार करना पड़ा।

इस पूरे परिवर्तन ने सरकार और संविधान को भी एक नई दिशा दे दी। जाहिर है कि आर्थिक क्षेत्र में बढ़ती हुई भूमिका ने केंद्रीय सरकार की स्थिति को अधिक मज़बूत बना दिया, वहीं दूसरी तरफ राज्य सरकार की स्थिति को अपेक्षाकृत कमज़ोर किया। इसके अतिरिक्त जैसा कि हम जानते हैं कि सरकार के तीन अंग, यथा- कार्यपालिका, विधानमंडल और न्यायपालिका। इन तीनों अंगों में कार्यपालिका की स्थिति अधिक मज़बूत हुई। वस्तुतः संयुक्त राज्य अमेरिका में रूजवेल्ट की न्यू डील नीति ने संघ-राज्य संबंधों में संघ की स्थिति को अधिक मज़बूत बना दिया। अब संघीय सरकार आर्थिक बातों का संचालन और सामाजिक सुरक्षा नीति पर भी बल देने लगी। इस क्रम में प्रेसीडेंट रूजवेल्ट की टकराहट अमेरिकी न्यायपालिका से हुई तथा न्यायपालिका को भी शक्ति संतुलन में होने वाले इस नए बदलाव की स्थिति को समझना पड़ा।

पूंजीवाद बनाम साम्यवाद

जैसा कि हमने देखा, रूस की क्रांति के पश्चात् पहली साम्यवादी सरकार स्थापित हुई थी। आगे इसने एक नया आर्थिक मॉडल विकसित किया जो बाजार की शक्तियों पर स्थापित न होकर आर्थिक आयोजन (Economy Planning) पर आधारित था। यह मॉडल काफी सफल रहा था और इस कारण सोवियत रूस की अर्थव्यवस्था में तीव्र संवृद्धि (Growth) हुई थी। ठीक उसी समय पूंजीवादी अर्थव्यवस्था मंदी की चपेट में आ गई। इस कारण पूंजीवादी मॉडल की विश्वसनीयता को काफी गहरा झटका लगा था और वैश्विक स्तर पर समाजवादी विचारधारा की प्रगति होने लगी। उस संकट की घड़ी में केंसियन अर्थशास्त्र और न्यू डील एक व्यावहारिक समाधान के रूप में आया और इसने पूंजीवाद और समाजवाद के बीच एक मध्यम प्रकार का मॉडल विकसित करने का प्रयास किया।

इनके द्वारा पूंजीवाद को एक मानवीय चेहरा देकर साम्यवाद का मुकाबला करने का प्रयास किया गया। सोवियत रूस की क्रांति ने मज़दूरों को आकर्षित करने का प्रयास किया था, वहीं केंसियन मॉडल ने सरकारी व्यय तथा मज़दूरों के कल्याण की योजना लाकर साम्यवादी प्रोपेगेंडा का सफलतापूर्वक सामना करना चाहा। इसलिये शीतयुद्ध के काल में केंसियन अर्थशास्त्र से पूंजीवाद को प्रेरणा मिलती रही। इस प्रकार आगे भले ही समाजवादी मॉडल स्वयं बिखर गया, परंतु उसने पूंजीवाद को समाजवाद के कुछ तरीकों को अपनाने के लिये विवश कर दिया।

■■■